



प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठ: माननीय श्री एस.आर. नायक, मुख्य न्यायाधीश

रिट याचिका क्र. 1917/1998

आदेश

आदेश की घोषणा हेतु नियत : 24/04/2006

सही/-
मुख्य न्यायाधीश





छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठ: माननीय श्री एस.आर. नायक, मुख्य न्यायाधीश

रिट याचिका क्र. 1917/1998

1. हीरा इंडस्ट्रीज लिमिटेड, कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत विधिवत पंजीकृत एक लोक लिमिटेड कंपनी है, जिसका पंजीकृत कार्यालय 572-उरला इंडस्ट्रीज एरिया, उरला, रायपुर (म.प्र.) में है।

...याचिकाकर्ता

बनाम

1. छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा सचिव, वित्त विभाग, छत्तीसगढ़ शासन, डी.के.एस. भवन, रायपुर।
2. सचिव, वाणिज्य एवं उद्योग विभाग, डी.के.एस. भवन, रायपुर।
3. उद्योग आयुक्त, वाणिज्य एवं उद्योग विभाग, रायपुर।
4. महाप्रबंधक, जिला उद्योग केंद्र, जगदलपुर, बस्तर (छ.ग.)

...उत्तरवादी

उपस्थित:

श्री बी.पी. शर्मा, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता।

श्री यशवंत सिंह, राज्य के विद्वान शासकीय अधिवक्ता।

आदेश

(24 अप्रैल, 2006 को पारित)

याचिकाकर्ता, हीरा इंडस्ट्रीज लिमिटेड, जो कि कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत पंजीकृत एक लोक लिमिटेड कंपनी है, जिसका पंजीकृत कार्यालय 572-उरला इंडस्ट्रीज एरिया, उरला, रायपुर, छत्तीसगढ़ राज्य में है, छत्तीसगढ़ सरकार और उसके प्राधिकारियों, यहां उत्तावादीगण द्वारा "मध्य प्रदेश परिवहन सब्सिडी योजना" के तहत उन्हें देय परिवहन सब्सिडी जारी नहीं करने की कार्यवाही से व्यथित होकर, यह रिट याचिका दायर की है।



(2) मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं:

याचिकाकर्ता कंपनी सीमेंट के निर्माण और उत्पादन में संलग्न है। याचिकाकर्ता कंपनी शुरू में "जय बजरंग सीमेंट प्राइवेट लिमिटेड" के नाम और शैली में अपना व्यवसाय कर रही थी। याचिकाकर्ता कंपनी का नाम बाद में वर्ष 1991 में हीरा इंडस्ट्रीज लिमिटेड के रूप में बदल दिया गया था। अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य के बस्तर और सरगुजा जिले और अब नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य का हिस्सा औद्योगिक रूप से सबसे पिछड़े जिले हैं, जिनमें मुख्य रूप से आदिवासी आबादी है। सरकार ने अपने वाणिज्य और उद्योग विभाग के माध्यम से इन जिलों को औद्योगिक रूप से बढ़ावा देने और विकसित करने के उद्देश्य से वर्ष 1978 में बस्तर और सरगुजा जिलों में औद्योगिक इकाइयों की स्थापना को बढ़ावा देने के लिए "परिवहन सब्सिडी योजना" (टीएसएस) नामक एक योजना शुरू की, जो 01-04-1978 को जारी की गई। औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के लिए इन जिलों में कच्चे माल और रेल द्वारा परिवहन सुविधाओं जैसी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध नहीं थीं। इसलिए सरकार ने टीएसएस के तहत परिवहन शुल्क पर सब्सिडी देने का वचन किया। यह उन औद्योगिक इकाइयों को प्रोत्साहन के रूप में किया गया था, यदि वे पिछड़े क्षेत्रों में स्थापित की जाती हैं। टीएसएस के संदर्भ में, औद्योगिक इकाई और रेलवे हेड के बीच की दूरी के लिए औद्योगिक इकाइयों द्वारा वहन किए गए परिवहन शुल्क की प्रतिपूर्ति उत्तरवादी 2 से 4 प्राधिकारियों द्वारा की जानी है। याचिकाकर्ता कंपनी ने टीएसएस और उत्तरवादीगण द्वारा दिए गए प्रोत्साहन का लाभ उठाते हुए पंडरीपानी गांव, तहसील जगदलपुर, जिला बस्तर में अपना सीमेंट संयंत्र स्थापित किया और परिवहन सब्सिडी योजना के नियमों के नियम 6 के खंड (4) में उल्लिखित टीएसएस के तहत निकटतम रेलवे हेड रायपुर है।

(3) याचिकाकर्ता की इकाई ने 18-10-1986 को अपना वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया। वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करने के बाद, याचिकाकर्ता-कंपनी टीएसएस नियमों के अनुसार पांच वर्ष की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी के लिए पात्र थी, यानी 17-10-1991 तक। वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करने के बाद, याचिकाकर्ता कंपनी ने उत्तरवादी 2 से 4 के समक्ष



परिवहन सब्सिडी के लिए अपना दावा किया। प्रारंभ में, उत्तरवादी 2 से 4 ने परिवहन सब्सिडी की राशि आंशिक रूप से जारी की और वह भी केवल अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य के भीतर परिवहन किए गए माल के संबंध में।

याचिकाकर्ता कंपनी ने इस परिस्थिति में महाप्रबंधक, जिला उद्योग केंद्र, जगदलपुर, जो कि यहां चौथे उत्तरवादी है, को राज्य के बाहर माल के परिवहन के लिए भी सब्सिडी जारी करने के लिए एक अभ्यावेदन दिया। चौथे उत्तरवादी ने याचिकाकर्ता-कंपनी के वैध दावे की विवेचना करते हुए, वाणिज्य और उद्योग विभाग के आयुक्त, तीसरे उत्तरवादी को राज्य के बाहर माल के परिवहन के लिए भी सब्सिडी देने की अनुशंसा की थी। तीसरे उत्तरवादी ने चौथे प्रतिवादी की अनुशंसा को स्वीकार करते हुए सरकार को दिनांक 16-09-1994 को लिखे अपने पत्र में याचिकाकर्ता कंपनी को राज्य के बाहर माल के परिवहन के लिए सब्सिडी देने की अनुशंसा की थी। अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य की सरकार, यहां प्रथम उत्तरवादी, जिसका अभ्यावेदन इसके सचिव, वित्त विभाग द्वारा किया गया, यहां द्वितीय उत्तरवादी ने, उत्तरवादी 3 और 4 की अनुशंसाओं के आलोक में, राज्य के बाहर माल के परिवहन के लिए सब्सिडी देने के लिए याचिकाकर्ता कंपनी के दावे को स्वीकार कर लिया था और अपने आदेश दिनांक 16-12-1994 के तहत याचिकाकर्ता कंपनी को परिवहन सब्सिडी के भुगतान का निर्देश दिया था। तदनुसार, द्वितीय उत्तरवादी ने तीसरे उत्तरवादी को याचिकाकर्ता कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने का निर्देश दिया था।

यह भी कहा गया है कि एक अन्य कंपनी मेसर्स रुद्र सीमेंट लिमिटेड ने राज्य के बाहर माल के परिवहन के लिए परिवहन सब्सिडी के लिए अपना दावा प्रस्तुत किया था, तथा उस कंपनी के दावे को स्वीकार करते हुए सरकार ने राज्य के बाहर माल के परिवहन के संबंध में भी उस कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान किया था।

- (4) उत्तरवादी 1 और 2 के दिनांक 16-12-1994 के आदेश/निर्देश के बावजूद, याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा उत्तरवादीगण को समय-समय पर कई बार ज्ञापन दिए जाने के बावजूद याचिकाकर्ता



कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान नहीं किया गया। यह कहा गया है कि टीएसएस 1996-97 तक लागू रहा।

- (5) टीएसएस के तहत परिवहन सब्सिडी का दावा उत्तरवादीगण द्वारा बजट के अनुदान संख्या 41, बजट शीर्ष 2852, उद्योग 796 जनजातीय क्षेत्र, उप-योजना 006- परिवहन सब्सिडी (योजना) से भुगतान किया जाना था। उपरोक्त अनुदान संख्या 41 में कोई निधि उपलब्ध नहीं थी। उत्तरवादीगण ने परिवहन सब्सिडी के लिए याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा दावा कृत गए 43,35,451/- रुपये का भुगतान नहीं किया।
- (6) याचिकाकर्ता कंपनी के अनुसार, 43,35,451/- रुपये की उक्त राशि में से 8,44,747/- रुपये की राशि इस आधार पर काट ली गई कि याचिकाकर्ता कंपनी को पहले के सब्सिडी बिलों में 8,44,747/- रुपये की राशि का अधिक भुगतान किया गया था, और मामले के उस दृष्टिकोण से, चौथे उत्तरवादी ने अपने पत्र दिनांक 25-05-1995 द्वारा केवल 34,90,704/- रुपये के भुगतान की सिफारिश की, और उस पत्र की एक प्रति अनुलग्नक-पी/8 के रूप में प्रस्तुत की गई है। यह कहा गया है कि उत्तरवादी 2 से 4 ने समय-समय पर याचिकाकर्ता कंपनी के परिवहन सब्सिडी के दावे के भुगतान के लिए राज्य सरकार से धनराशि की मांग की। तीसरे उत्तरवादी ने सरकार को संबोधित अपने पत्र दिनांक 15-12-1997 के माध्यम से याचिकाकर्ता कंपनी को परिवहन सब्सिडी के भुगतान के लिए आवश्यक धनराशि के आवंटन की मांग की, लेकिन सरकार ने कोई धनराशि जारी नहीं की। दिनांक 15-12-1997 के उस पत्र की एक प्रति अनुलग्नक-पी/9 के रूप में भी प्रस्तुत की गई है।
- (7) इस परिस्थिति में, याचिकाकर्ता कंपनी ने 01-05-1998 को मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में यह रिट याचिका दायर की, जिसमें राज्य सरकार को अनुदान संख्या 41, बजट शीर्ष संख्या 2852, उद्योग संख्या 796 आदिवासी क्षेत्र, उप-योजना 006- परिवहन सब्सिडी (योजना) में धन उपलब्ध कराने के लिए और याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा दावा किए गए परिवहन सब्सिडी को जारी करने के लिए उत्तरवादी 2 से 4 को निर्देश देने के लिए एक परमादेश जारी करने की मांग की गई।



- (8) उत्तरवादीगण ने 06-04-2000 को जवाब दाखिल करके रिट याचिका का विरोध किया। जवाब में मुख्य तर्क यह है कि सरकार के दिनांक 16-12-1994 के आदेश को बाद में अवैध पाया गया और इसलिए, सरकार ने 23-06-1999 को एक और आदेश जारी करके उसे रद्द कर दिया और इसलिए, याचिकाकर्ता - कंपनी के दावे का मूल आधार अस्तित्वविहीन है और मामले के उस दृष्टिकोण से, याचिकाकर्ता - कंपनी परिवहन सब्सिडी की हकदार नहीं है। यह तर्क दिया गया है कि 16-12-1994 का आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के खंड (2) और (3) द्वारा सरकार को प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग को नियंत्रित करने वाले व्यवसाय के नियमों के आज्ञापक प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए जारी किया गया था। उत्तरवादीगण द्वारा यह तर्क दिया गया कि चूंकि सरकार के दिनांक 23-06-1999 के आदेश को चुनौती नहीं दी गई थी, इसलिए वह आदेश याचिकाकर्ता कंपनी पर बंधनकारी है। द्वितीयतः, यह तर्क दिया गया कि टीएसएस 25-11-1989 को समाप्त हो गया था और इस तथ्य का खुलासा याचिकाकर्ता कंपनी ने जानबूझकर नहीं किया था। मेसर्स रुद्र सीमेंट लिमिटेड को परिवहन सब्सिडी के भुगतान के संबंध में, यह कहा गया है कि सरकार ने महसूस किया कि परिवहन सब्सिडी उक्त कंपनी को गलत तरीके से भुगतान की गई थी, गलत तरीके से किए गए परिवहन सब्सिडी के भुगतान की वसूली के लिए उक्त कंपनी को 05-08-1999 को एक नोटिस जारी किया गया था। याचिकाकर्ता कंपनी ने उत्तरवादीगण की उपरोक्त जवाब पर अपना प्रत्युत्तर दिनांक 06-07-2000 को दायर किया। प्रत्युत्तर में, यह कहा गया है कि सरकार का दिनांक 23-06-1999 का आदेश याचिकाकर्ता के वैध दावे को विफल के लिए एक सोची समझा कदम है और वास्तव में, सरकार के पास टीएसएस के सम्बन्ध में परिवहन सब्सिडी के भुगतान का निर्देश देने वाले 16-12-1994 के पूर्व के आदेश को रद्द करने का कोई विधिक अधिकार नहीं था। यह तर्क दिया गया है कि उत्तरवादी "वचन विबंध के सिद्धांतों" और "वैध अपेक्षा" से बंधे हैं और वे दिनांक 16-12-1994 के आदेश में किए गए अपने वचन से पीछे नहीं हट सकते। उत्तरवादीगण के इस तर्क को ध्यान में रखते हुए कि टीएसएस केवल 25-11-1989 तक ही प्रचलन में था, याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा यह तर्क दिया गया है कि तीसरे उत्तरवादी के दिनांक 15-12-1997



के पत्र के अनुसार, जिसे अनुलग्नक-पी/6 के रूप में चिह्नित किया गया है, टीएसएस वर्ष 1996-97 तक अस्तित्व में था और इसलिए, 25-11-1989 के पत्र में जो कहा गया है, जिसे अनुलग्नक-आर-III के रूप में चिह्नित किया गया है, जिस पर उत्तरवादीगण ने भरोसा किया है, जो कि तीसरे उत्तरवादी के दिनांक 15-12-1997 के पत्र से पहले का है, तथ्यात्मक रूप से गलत है।

- (9) याचिकाकर्ता कंपनी ने बाद की घटनाओं - सरकार के 23-06-1999 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता कंपनी को परिवहन सब्सिडी देने के अपने पूर्व के निर्णय को पलटने और उत्तरवादीगण द्वारा परिवहन सब्सिडी देने से इनकार करने - के मद्देनजर रिट याचिका में संशोधन के लिए अंतरवर्ती आवेदन संख्या 2608/2000 दायर की। संशोधन के जरिए याचिकाकर्ता कंपनी ने रिट याचिका में की गई अन्य प्रार्थनाओं के अलावा 23-06-1999 के शासकीय आदेश को रद्द करने की मांग की। इसने 'वैध अपेक्षा' और वचन निबंध' के सिद्धांतों पर आधारित आधार लेने की भी मांग की। इसने यह आधार भी उठाने की मांग की कि सरकार का 23-06-1999 का आदेश विधि की दृष्टि में अकृतता है, क्योंकि उस आदेश को पारित करने से पहले याचिकाकर्ता कंपनी को कोई नोटिस जारी नहीं किया गया था। अंतरवर्ती आवेदन संख्या 2608/2000 को न्यायालय ने 31-03-2006 को आदेशित किया था। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने रिट याचिका के मुख्य भाग में संशोधन किया है।
- (10) रिट याचिका पर अंतिम निराकरण हेतु 31-03-2006 और 13-04-2006 को सुनवाई की गई।
- (11) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री बी.पी. शर्मा ने तर्क दी कि उत्तरवादीगण ने याचिकाकर्ता कंपनी को टी.एस.एस. के अनुसार परिवहन शुल्क की प्रतिपूर्ति करने का वचन किया है और परिवहन सब्सिडी के भुगतान का निर्देश देने वाले शासकीय आदेश दिनांक 16-12-1994 के आलोक में उत्तरवादी अपने वचन से पीछे नहीं हट सकते और याचिकाकर्ता कंपनी को देय परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने से इनकार नहीं कर सकते। विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि वचन विबंध और वैध अपेक्षा के सिद्धांत लागू होते हैं और उत्तरवादी टी.एस.एस. के तहत



अपने वचन के अनुसार परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के लिए विधिक रूप से बाध्य हैं। 23-06-1999 के शासकीय आदेश पर हमला करते हुए तर्क दी गई कि वह आदेश स्पष्ट रूप से अवैध है और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पूरी तरह उल्लंघन करता है। यह इंगित किया गया कि अपने पिछले शासकीय आदेश दिनांक 16-12-1994 को रद्द करने वाले 23-06-1999 के आदेश को पारित करने से पहले याचिकाकर्ता कंपनी को मामले में अपनी बात रखने के लिए कोई नोटिस जारी नहीं किया। वैकल्पिक रूप से, यह तर्क दिया गया कि सरकार द्वारा दिनांक 16-12-1994 के आदेश को रद्द करने के लिए दिए गए कारण तथ्यात्मक रूप से गलत हैं। यह तर्क दिया गया कि दिनांक 16-12-1994 को शासकीय आदेश जारी करते समय संविधान के अनुच्छेद 166 के खंड (2) और (3) के तहत शक्ति के प्रयोग को नियंत्रित करने वाले व्यवसाय के नियमों का उल्लंघन नहीं किया गया था जैसा कि उत्तरवादीगण ने अपने जवाब में आरोप लगाया है। इसके अलावा, यह तर्क दिया गया कि यह मानते हुए भी कि दिनांक 16-12-1994 का शासकीय आदेश संविधान के अनुच्छेद 13 के खंड (1) और (3) के प्रावधानों के पूर्ण अनुरूप जारी नहीं किया गया था, तब भी, दिनांक 16-12-1994 का शासकीय आदेश उस आधार पर दोषपूर्ण नहीं है क्योंकि अनुच्छेद 168 का प्रावधान केवल निर्देशात्मक है और आज्ञापक नहीं है। श्री बी.पी. शर्मा उत्तरवादीगण के इस तर्क को देखते हुए कि चौथे उत्तरवादी द्वारा प्रमाण पत्र (अनुलग्नक-पी/2) जारी करते समय कि याचिकाकर्ता कंपनी परिवहन सब्सिडी के लिए 43,35,451 रुपए की हकदार है, इस तथ्य को ध्यान में नहीं रखा गया कि परिवहन सब्सिडी की गणना औद्योगिक इकाई के वास्तविक स्थान और रेल हेड के बीच की दूरी के आधार पर की जाएगी, यह तर्क प्रस्तुत किया कि यह तर्क अपुष्ट है। यह इंगित किया गया है कि याचिकाकर्ता - कंपनी ने फैक्ट्री आउटलेट से रायपुर रेल हेड तक और वहां से आने वाले वास्तविक माल ढुलाई प्रभार/परिवहन प्रभार का ही दावा किया है जो कि टीएसएस के तहत प्रदान किया गया रेल हेड है। श्री शर्मा मेरा ध्यान अनुलग्नक-पी/8 की ओर आकर्षित करना चाह जो कि रेलवे द्वारा प्रमाणित 1986 से 1991 तक की सुसंगत अवधि में तय और विद्यमान गणना



किए गए शुल्क/टैरिफ को दिखाने वाला एक चार्ट है और याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा फैक्ट्री आउटलेट से रायपुर रेल हेड तक माल के परिवहन के लिए उपगत किया गया है।

- (12) उत्तरवादीगण की ओर से विद्वान शासकीय अधिवक्ता श्री यशवंत सिंह ने उत्तरवादीगण की आक्षेपित कार्यवाही का समर्थन करते हुए इस बात पर प्रकाश डाला कि याचिकाकर्ता कंपनी का संपूर्ण दावा सरकार के आदेश दिनांक 16-12-1994 पर आधारित है और चूंकि उस आदेश को बाद में सरकार ने अपने आदेश दिनांक 23-06-1999 के जरिए रद्द कर दिया था, इसलिए दावे का आधार ही समाप्त हो जाता है और इसलिए याचिकाकर्ता कंपनी टीएसएस के तहत परिवहन सब्सिडी पाने की हकदार नहीं है। विद्वान शासकीय अधिवक्ता ने तर्क दिया कि सरकार द्वारा अपने पहले के आदेश दिनांक 16-12-1994 को रद्द करने के लिए बताए गए कारण वैध और तर्कसंगत हैं। यह तर्क दिया गया कि दिनांक 16-12-1994 को आदेश जारी करते समय संविधान के अनुच्छेद 168 के आज्ञापक प्रावधानों का पालन नहीं किया गया। अधिवक्ता ने कहा कि टीएसएस केवल 01-04-1978 और 01-05-1989 के बीच ही प्रचलन में था, जबकि याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा प्रस्तुत दावा 18-10-1986 और 17-10-1991 के बीच की अवधि से संबंधित है और इसलिए किसी भी परिस्थिति में याचिकाकर्ता कंपनी 25-11-1989 को टीएसएस को खत्म/वापस लेने के बाद परिवहन सब्सिडी पाने की हकदार नहीं है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क का समर्थन करते हुए कि परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के मामले में उत्तरवादी द्वेषपूर्ण भेदभाव करने के दोषी हैं, विद्वान शासकीय अधिवक्ता द्वारा बताया गया कि हालांकि राज्य के बाहर माल के परिवहन के संबंध में मेसर्स रुद्र सीमेंट लिमिटेड को परिवहन सब्सिडी का भुगतान किया गया था, सरकार को त्रुटि का एहसास होने पर बाद में उस कंपनी को गलत तरीके से भुगतान की गई परिवहन सब्सिडी वापस करने के लिए नोटिस जारी किया था।

- (13) पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के पश्चात्, निर्णय हेतु यह प्रश्न उठता है कि क्या उत्तरवादीगण 18-10-1986 से 17-10-1991 के मध्य पांच वर्ष की अवधि के लिए



याचिकाकर्ता-कंपनी को टीएसएस के अंतर्गत परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के लिए बाध्य हैं तथा क्या सरकार का दिनांक 23-06-1999 का आदेश वैध एवं विधिक है।

- (14) मैं सोचता हूँ कि याचिकाकर्ता-कंपनी के विद्वान अधिवक्ता की यह तर्क कि 'वचन विबंध' और 'वैध अपेक्षा' के सिद्धांत इस मामले के तथ्यों पर लागू होते हैं और उत्तरवादीगण को अपने वचन से पीछे हटने की अनुमति नहीं दी जा सकती, अच्छी तरह से स्थापित है। मूल तथ्य विवाद में नहीं हैं। सरकार द्वारा बस्तर और सरगुजा जिलों में औद्योगिक वृद्धि और विकास को बढ़ावा देने के लिए 01-04-1978 से टीएसएस तैयार करने के बाद, याचिकाकर्ता ने बस्तर जिले के जगदलपुर तहसील के पंडरीपानी गांव में अपना सीमेंट संयंत्र स्थापित किया और 18-10-1986 से इसका वाणिज्यिक उत्पादन शुरू हुआ। मध्य प्रदेश सरकार, वाणिज्यिक और उद्योग विभाग के ज्ञापन क्रमांक एफ 16/23/77/बी-11 दिनांक 11-04-1978 के तहत अनुमोदित और जारी परिवहन सब्सिडी योजना के लिए सुसंगत नियम, उत्तरवादीगण द्वारा स्वयं अपने जवाब के साथ अनुलग्नक-आर-॥ के रूप में प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार हैं:

परिवहन सब्सिडी योजना के नियम

1. संक्षिप्त शीर्षक

इस योजना को मध्य प्रदेश परिवहन सब्सिडी योजना, 1978 कहा जाएगा।

2. प्रारंभ और अवधि

यह 1 अप्रैल, 1978 से लागू होगा और 5 वर्षों की अवधि तक संचालित होगा।

(टीप:वाणिज्य एवं उद्योग विभाग के ज्ञापन क्रं.

9902/6390/11/ब दिनांक 1.9.85 द्वारा उक्त योजना को

सातवीं पंचवर्षीय योजना में निरंतर रखने की स्वीकृति प्रदान की गयी)

3. प्रयोज्यता



यह राज्य के बस्तर और सरगुजा जिलों में स्थित सभी औद्योगिक इकाइयों (बागानों, रिफाइनरियों और विद्युत उत्पादन इकाइयों को छोड़कर) पर लागू है, चाहे वे किसी भी आकार की हों।

4. परिभाषाएं

- (a) औद्योगिक इकाई-से तात्पर्य ऐसी औद्योगिक इकाई से है जहां विनिर्माण कार्यक्रम चलाया जाता है।
- (b) नई औद्योगिक इकाई से तात्पर्य ऐसी औद्योगिक इकाई से है, जिसने विनिर्माण क्षमता स्थापित कर ली है तथा इस योजना के प्रारंभ होने की तिथि को या उसके बाद उत्पादन प्रारंभ कर दिया है।
- (c) चयनित क्षेत्र-से तात्पर्य बस्तर एवं सरगुजा जिले से है।
(सरगुजा जिले की मनेन्द्रगढ़ एवं बैकुण्ठपुर तहसील को छोड़कर)
- (d) कच्चा माल- से तात्पर्य किसी औद्योगिक इकाई द्वारा भारत सरकार/और/या राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित अपने विनिर्माण कार्यक्रम में वास्तव में आवश्यक और प्रयुक्त किसी कच्चे माल से है।
- (e) तैयार माल- से तात्पर्य भारत सरकार और/या राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित विनिर्माण कार्यक्रम के अनुसार किसी औद्योगिक इकाई द्वारा वास्तव में उत्पादित माल से है।

5. योजना द्वारा आच्छादित क्षेत्र

फंड यह योजना केवल चयनित क्षेत्रों में स्थित औद्योगिक इकाइयों तक ही सीमित है।

6. योजना का विवरण

"(6) (i) चयनित क्षेत्रों में अवस्थित नई औद्योगिक इकाइयों को, उस तिथि से पांच वर्ष की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी दी जाएगी, जिस तिथि से इकाई उत्पादन शुरू करेगी। यह सब्सिडी, ऐसे क्षेत्र में लाए जाने



वाले कच्चे माल और ऐसे क्षेत्र से बाहर ले जाए जाने वाले तैयार माल के संबंध में दी जाएगी।"

(ii) औद्योगिक इकाइयां जिले के भीतर से प्राप्त कच्चे माल और जिले के भीतर तैयार माल के वितरण लिए परिवहन सब्सिडी के लिए पात्र नहीं होंगी।

(iii) परिवहन सब्सिडी की गणना चयनित जिलों की तहसीलों के लिए कारखाने के वास्तविक स्थान और रेलवे हेड के बीच की दूरी के आधार पर की जाएगी।

(iv) दूरी की गणना के लिए रेलहेड निम्नानुसार होगा: -

जिला	तहसील	रेल हेड
1. बस्तर	सभी तहसीलें	रायपुर
2. सरगुजा	भरतपुर (जनकपुर)	शहडोल
	सूरजपुर	सूरजपुर रोड
	पाल	गेरवा रोड
	सामरी	गेरवा रोड
	अंबिकापुर	बिश्रामपुर

(v) उद्योग निदेशक, संबंधित जिले के कलेक्टर के परामर्श से सड़क परिवहन के लिए मालभाड़ा प्रभार का निर्धारण प्रतिवर्ष करेंगे। किसी विशेष वर्ष के दौरान ऐसा कोई निर्धारण न होने की स्थिति में, पिछले वर्ष के दौरान निर्धारित दरें लागू होंगी।

(vi) सब्सिडी (ii) के आधार पर निर्धारित राष्ट्रीय रेलवे मालभाड़े और पैरा (v) में निर्धारित सड़क परिवहन मालभाड़े के बीच के अंतर पर देय होगी, भले ही परिवहन का वास्तविक तरीका कुछ भी हो, बशर्ते कि सड़क परिवहन मालभाड़ा अधिक हो।



(वाणिज्य एवं उद्योग विभाग के ज्ञापन क्रमांक 16/3/86/11/ब दिनांक 20.3.86/24.3.86 द्वारा नियम 6 (vi) को निम्नानुसार संशोधन किया गया:-

"6 (vi) वैकल्पिक रेल भाड़े, एवं सड़क परिवहन भाड़े (उद्योग आयुक्त द्वारा वार्षिक आधार पर निश्चित दी गई दर पर) अथवा इकाई द्वारा वास्तविक रूप से दी गई, भाड़े की राशि, जो भी कम हो, का अंश का अंतर अनुदान के रूप में देय होगा।"

(vii) रेलवे स्टेशन और औद्योगिक इकाई के फैक्ट्री स्थल पर लदान या उतराई की लागत और अन्य हैंडलिंग प्रभारों को परिवहन लागत निर्धारित करने के प्रयोजन के लिए विचार में नहीं लिया जाएगा।

(viii) नई औद्योगिक इकाइयों के लिए मशीनरी और कलपुर्जों की परिवहन के लिए परिवहन सब्सिडी भी देय होगी।

(ix) परिवहन सब्सिडी के किसी भी दुरुपयोग को रोकने के लिए, उद्योग निदेशक समय-समय पर जांच करेंगे ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि जिन कच्चे माल, तैयार माल और मशीनरी तथा कलपुर्जों के लिए परिवहन सब्सिडी दी गई है, उनका वास्तव में उपयोग किया गया है। इसके लिए कच्चे माल की खपत, तैयार खाद्य पदार्थों के उत्पादन और मशीनों की लॉग बुक का सत्यापन किया जाएगा।

(x) परिवहन सब्सिडी के लिए पृथक से पंजीयन आवश्यक नहीं होगा, किन्तु परिवहन सब्सिडी का लाभ लेने की इच्छुक औद्योगिक इकाई को जिला उद्योग अधिकारी एवं अपर संचालक, उद्योग, भिलाई को सब्सिडी का दावा करने की प्रस्तावित तिथि से पूर्व योजना का विवरण देते हुए अपनी मंशा से अवगत कराना होगा।



(xi) उद्योग निदेशक न केवल परिवहन सब्सिडी के दावों की समय पर जांच की व्यवस्था करेंगे बल्कि दावों के शीघ्र भुगतान की भी व्यवस्था करेंगे। आम तौर पर, एक औद्योगिक इकाई द्वारा अप्रैल से शुरू होने वाले आधे वर्ष के लिए परिवहन सब्सिडी का दावा किया जा सकता है। यदि औद्योगिक इकाई की वित्तीय स्थिति इसकी मांग करती है तो मंजूरी देने वाला अधिकारी अपने विवेक से एक से अधिक दावों पर विचार कर सकता है। दावे छमाही की समाप्ति के एक महीने के भीतर प्रस्तुत किए जाएंगे। परिवहन सब्सिडी के लिए सभी तरह से पूर्ण दावा संबंधित जिला उद्योग अधिकारी को फॉर्म 'ए' में प्रस्तुत किया जाएगा, जो इसे अपने कार्यालय में प्राप्त होने के तीन सप्ताह के भीतर सत्यापित करके अतिरिक्त निदेशक, उद्योग भिलाई को भेजेंगे। उचित जांच के बाद अतिरिक्त निदेशक, उद्योग अपने कार्यालय में दावा प्रस्ताव प्राप्त होने के दो सप्ताह के भीतर सब्सिडी दावे को मंजूरी देंगे। सब्सिडी का वितरण संबंधित जिला उद्योग अधिकारी द्वारा मंजूरी जारी होने की तारीख से 15 दिनों के भीतर किया जाएगा।

चूंकि याचिकाकर्ता-कंपनी ने अपना सीमेंट संयंत्र पंडरीपानी गांव, तहसील जगदलपुर, जिला बस्तर में स्थापित किया था, जब टीएसएस चालू था और इसने 18-10-1986 को अपना वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया था, इसलिए परिवहन सब्सिडी योजना के नियमों के नियम 6(1) के अनुसार याचिकाकर्ता-कंपनी 18-06-1986 से पांच वर्ष की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी पाने की हकदार है। दूसरे शब्दों में, याचिकाकर्ता-कंपनी 18-10-1986 से 17-10-1991 तक की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी का दावा करने की हकदार है। सीमेंट संयंत्र ने 18-10-1986 से अपना वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करने के बाद, याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा किए गए अभ्यावेदन के अनुसरण में, वित्त विभाग के सचिव द्वारा अभ्यावेदन किए गए अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य सरकार ने उत्तरवादी 3 और 4 की सिफारिशों के मद्देनजर



याचिकाकर्ता-कंपनी को टीएसएस के तहत सब्सिडी देने का आदेश 16-12-1994 को पारित किया। यहां तक कि बाद की घटनाएं, जिनका संदर्भ ऊपर दिया गया है, यह दिखाने के लिए पर्याप्त हैं कि 16-12-1994 के बाद भी उत्तरवादी 2 से 4 ने समय-समय पर याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के लिए आवश्यक निधि जारी करने के लिए राज्य सरकार को अभ्यावेदन किया और इसी तरह की परिस्थितियां अन्य के सामने आईं। उदाहरण के लिए, तीसरे उत्तरवादी ने सरकार को संबोधित अपने पत्र दिनांक 15-12-1997 के माध्यम से याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी के भुगतान के लिए आवश्यक निधि के आवंटन की मांग की। जैसा कि ऊपर बताया गया है, यह रिट याचिका मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में 01-05-1998 को दायर की गई थी। उसके बाद ही मध्य प्रदेश सरकार ने 23-06-1999 को अपने पहले के आदेश दिनांक 16-12-1994 को इस आधार पर रद्द करते हुए आपत्तिजनक आदेश पारित किया कि 16-12-1994 का शासकीय आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के खंड (2) और (3) के प्रावधानों का पालन किए बिना जारी किया गया था। इस स्तर पर ही, यह ध्यान देने की जरूरत है कि सरकार ने याचिकाकर्ता-कंपनी को मामले में अपनी बात रखने के लिए कोई नोटिस जारी किए बिना अपने पहले के आदेश दिनांक 16-12-1994 को रद्द करते हुए 23-06-1999 का आदेश जारी किया। प्रभावितों को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 से निकलने वाले संवैधानिक पंथ से अवगत कराया जाना चाहिए। 16-12-1994 के आदेश के तहत याचिकाकर्ता कंपनी ने 18-10-1986 से 17-10-1991 की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी का दावा करने का अधिकार अर्जित किया था। 16.12.1994 के शासकीय आदेश के तहत याचिकाकर्ता कंपनी को जो अधिकार अर्जित हुए थे, उन्हें याचिकाकर्ता कंपनी की सुनवाई किए बिना 23-6-1999 को आदेश जारी करके सरकार द्वारा नहीं छिना जाना चाहिए था। केवल उस संक्षिप्त आधार पर की, 23-6-1999 का शासकीय आदेश प्राकृतिक न्याय और कार्यवाही में निष्पक्षता के सिद्धांतों के पूर्ण उल्लंघन के लिए रद्द करने योग्य है। अन्यथा भी, मेरी सुविचारित राय में, 23-6-1999 का शासकीय आदेश स्पष्ट रूप से



मनयह अभिनिर्धारित किया , अनुचित है और वर्तमान में बताए जाने वाले कारणों से 'वचन विबंध' और 'वैध अपेक्षा' के सिद्धांतों के विपरीत है।

- (15) सरकार द्वारा अपने पूर्व के आदेश दिनांक 16.12.1994 को रद्द करने के लिए दिनांक 23.6.1999 को आदेश पारित करने का आधार यह है कि दिनांक 16.12.1994 का शासकीय आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के खंड (2) और (3) का उल्लंघन करके जारी किया गया था। उस आधार को उत्तरवादीगण ने जवाब के पैरा 4 में बताया है। हमने उत्तरवादीगण द्वारा उनके जवाब के पैरा 4 में उठाए गए बचाव को पढ़ा है। यह जितना अस्पष्ट हो सकता था, उतना अस्पष्ट है। यह कहने के अलावा कि "भारत के संविधान के अनुच्छेद 166 के खंड (2) और (3) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते समय इस प्रकार बनाए गए कार्य नियमों के आज्ञापक प्रावधानों को 16.12.1994 का आदेश जारी करते समय पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया था", उत्तरवादीगण ने विवरण नहीं दिया है कि अनुच्छेद 166 के तहत राज्यपाल द्वारा अपने मंत्रिपरिषद की सलाह पर बनाए गए किन व्यवसाय के नियमों का उल्लंघन किया है। यहां तक कि बहस के दौरान भी उत्तरवादीगण के विद्वान अधिवक्ता किसी विशिष्ट व्यवसाय के नियम के उल्लंघन की ओर इशारा करने की स्थिति में नहीं थे, सिवाय इसके कि उन्होंने अस्पष्ट रूप से कहा कि 16.12.1994 का शासकीय आदेश व्यवसाय के नियम के उल्लंघन में जारी किया गया था। इसलिए उपर्युक्त तर्क को केवल खारिज करने के लिए ही देखना आवश्यक था। संविधान के अनुच्छेद 166 के खंड (1) के अनुसार राज्य सरकार की सभी कार्यकारी कार्यवाही राज्यपाल के नाम से की जानी चाहिए। अनुच्छेद 166 के खंड (1) के अनुपालन के लिए शब्दों के किसी विशेष सूत्र की आवश्यकता नहीं है। न्यायालय को यह देखना है कि उसकी आवश्यकताओं के सार का अनुपालन किया गया है या नहीं। **चित्रलेखा आर बनाम मैसूर राज्य**¹ मामले में सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है, कि अनुच्छेद 166 के प्रावधान केवल निर्देशात्मक हैं, आज्ञापक नहीं हैं और यदि उनका अनुपालन नहीं किया गया तो भी यह तथ्य के प्रश्न के रूप में स्थापित किया जा सकता है कि आपेक्षित आदेश वास्तव में

¹ एआईआर 1964 एससी 1823: (1964) 6 एससीआर-368



राज्य सरकार या राज्यपाल द्वारा जारी किया गया था। अनुच्छेद 166 का खंड (1) यह निर्धारित नहीं करता है कि सरकार की कार्यकारी कार्यवाही कैसे की जानी है; यह केवल यह निर्धारित करता है कि इस तरह के कार्य को किस तरह से व्यक्त किया जाना है। जबकि खंड (1) अभिव्यक्ति के तरीके से संबंधित है, खंड (2) उन तरीकों को निर्धारित करता है जिनसे आदेश को व्यक्त किया जाना है। अनुच्छेद 166 के संदर्भ में कोई शासकीय आदेश है या नहीं, इसका निर्णय प्रत्येक मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि से किया जाना चाहिए। इसके अलावा, **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम ओम प्रकाश गुप्ता**² में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के तहत बनाए गए कार्य के नियम केवल निर्देशात्मक हैं, इसलिए उनका पर्याप्त अनुपालन पर्याप्त है।

(16) वर्तमान मामले में उत्तरवादीगण ने यह नहीं दर्शाया है कि दिनांक 16.12.1994 का शासकीय आदेश किस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 166 (3) के अंतर्गत राज्यपाल द्वारा बनाए गए कार्य नियमों के अनुरूप नहीं है, सिवाय इसके कि उन्होंने बहुत अस्पष्ट और स्पष्ट बयान दिया है कि कार्य नियमों का उल्लंघन हुआ है।

(17) इसके बाद, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि 23.6.1999 का शासकीय आदेश याचिकाकर्ता द्वारा 1.5.1998 को इस न्यायालय में रिट याचिका दायर करने के बाद ही जारी किया गया था। इससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि 23.6.1999 के विवादित आदेश को पारित करके, सरकार याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के अपने दायित्व से बचना चाहती थी। इसलिए, 23.6.1999 के शासकीय आदेश में मनमानी, अनुचितता और टीएसएस के संदर्भ में याचिकाकर्ता को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के अपने दायित्व से बचने के लिए बेईमानी की बू आती है। इस मामले को देखते हुए, 23.6.1999 का शासकीय आदेश संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधानों के विपरीत होने के कारण निंदा के योग्य है।

(18) वचन विबंध के सिद्धांत को न्यायालयों द्वारा साम्य के सिद्धांत पर अन्याय से बचने के लिए विकसित किया गया है। वचन विबंध के सिद्धांत के अनुसार, जब एक पक्ष अपने शब्दों या

² एआईआर 1970 एससी 679 (1969) 3 एससीसी 775



आचरण से दूसरे पक्ष से स्पष्ट और सुस्पष्ट वचन या अभ्यावेदन करता है, जिसका उद्देश्य विधिक समाधान तैयार करना या भविष्य में उत्पन्न होने वाले विधिक संबंध को प्रभावित करना है, यह जानते हुए या आशय रखते हुए कि जिस दूसरे पक्ष से वचन या अभ्यावेदन किया गया है, उस पर अमल किया जाएगा और वास्तव में दूसरे पक्ष द्वारा उस पर अमल किया जाता है, तो वचन या अभ्यावेदन करने वाले पक्ष पर यह बंधनकारी होगा और यदि पक्षों के बीच हुए व्यवहार को ध्यान में रखते हुए उसे ऐसा करने की अनुमति देना अनुचित होगा, तो वह इससे पीछे हटने का हकदार नहीं होगा। वचन विबंध के सिद्धांत को अब प्रशासनिक विधि के क्षेत्र में अब सुस्थापित किया गया है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 115 भी कमोबेश उसी भाषा में लिखी गई है जो उसी अभिव्यक्ति को व्यक्त करती है। हालाँकि, जहाँ मामला साक्ष्य अधिनियम की धारा 115 के अंतर्गत नहीं आता है, वहाँ भी वचन विबंध का प्रयोग किया जा सकता है। सिद्धांत का सार यह है कि व्यक्ति को अपने वचनों को पूरा करना चाहिए, खासकर तब जब वचन कोई कोरा वचन न हो बल्कि इस आशय से किया गया हो कि दूसरा पक्ष उस पर अमल करे। दूसरे शब्दों में, एक वचन जो बंधनकारी होने का आशय रखता है, जिस पर अमल किया जाना है और जिस पर अमल किया गया है, वह बंधनकारी है। वचन विबंध पर रोक का सिद्धांत प्रशासनिक कार्यवाही की न्यायिक पुनर्विलोकन के सुप्रसिद्ध आधारों में से एक बन गया है। अब सुस्थापित हो चुका है कि वचन विबंध का सिद्धांत सरकार और लोक प्राधिकरणों पर समान रूप से लागू होता है।

- (19) हाल के वर्षों में "वचन विबंध" के सिद्धांत ने महत्व प्राप्त कर लिया है। इस विषय पर अग्रणी मामला **सेंट्रल लंदन प्रॉपर्टी ट्रस्ट लिमिटेड बनाम हाई ट्रीज हाउस लिमिटेड**³ है। हाई ट्रीज केस (पूर्वोक्त) में निर्धारित नियम **कॉम्बे बनाम कॉम्बे**⁴ में किंग्स बेंच के समक्ष फिर से विचार के लिए आया, जिसमें न्यायालय ने निर्णय दिया कि हाई ट्रीज केस (पूर्वोक्त) में वर्णित सिद्धांत यह है कि, जहाँ एक पक्ष ने अपने शब्दों या आचरण से दूसरे पक्ष को ऐसा वचन या आश्वासन दिया है जिसका उद्देश्य उनके बीच विधिक संबंधों को प्रभावित करना और तदनुसार कार्य करना है, तो, एक बार जब दूसरा पक्ष उसकी बात मान लेता है और उस पर कार्य करता है, तो वचन या

³ (1947) 1 केबी 130: 175 एलटी 332

⁴ (1951) 2 केबी 215: (1951) 1 आल ईआर 767 (सीए)



आश्वासन देने वाले पक्ष को बाद में पिछले विधि संबंधों में वापस जाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है जैसे कि उसके द्वारा ऐसा कोई वचन या आश्वासन नहीं दिया गया था, लेकिन उसे अपने विधि संबंधों को उस योग्यता के अधीन स्वीकार करना चाहिए जिसे उसने स्वयं प्रस्तुत किया है, भले ही यह किसी भी विचार से विधि के बिंदु पर समर्थित न हो, लेकिन केवल उसके शब्द से। **हाई ट्रीज केस (पूर्वोक्त)** में प्रतिपादित सिद्धांत को **टूल मेटल मैनुफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड बनाम टंगस्टन इलेक्ट्रिक कंपनी लिमिटेड**⁵ मामले में हाउस ऑफ लॉर्ड्स द्वारा भी मान्यता दी गई थी। **हाई ट्रीज केस (पूर्वोक्त)** में प्रतिपादित सिद्धांत को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **यूनियन ऑफ इंडिया बनाम एंग्लो अफगान एजेंसियां**⁶ और **टर्नर मॉरिसन एंड कंपनी लिमिटेड बनाम हंगरफोर्ड इन्वेस्टमेंट ट्रस्ट लिमिटेड**⁷ मामले में अपनाया गया था।

(20) *ब्लैक लॉ डिक्शनरी* में "वचन विबंध" को एक विबंध के रूप में परिभाषित किया गया है "जो तब उत्पन्न होता है जब कोई वचन दिया जाता है, जिसके बारे में वचन देने वाले को उचित रूप से उम्मीद करनी चाहिए कि वह वचन की ओर से एक निश्चित और पर्याप्त चरित्र की कार्यवाही या सहनशीलता को प्रेरित करेगा, और जो ऐसी कार्यवाही या सहनशीलता को प्रेरित करता है, और ऐसा वचन बंधनकारी है यदि अन्याय को केवल वचन के प्रवर्तन से टाला जा सकता है"।

(21) **सेंचुरी स्पेज एंड मैनुफैक्चरिंग कंपनी बनाम उल्हासनगर नगर पालिका**⁸ में नगर पालिका ने क्षेत्र में तत्कालीन मौजूदा औद्योगिक प्रतिष्ठानों को सात वर्ष की अवधि के लिए चुंगी शुल्क से छूट देने पर सहमति व्यक्त की थी। नगर पालिका के अभ्यावेदन पर कार्य करते हुए औद्योगिक प्रतिष्ठानों ने अपना व्यवसाय बढ़ाया। हालांकि, बाद में नगर पालिका ने शुल्क लगाने की मांग की। इसे औद्योगिक प्रतिष्ठान ने चुनौती दी। उच्चतम न्यायालय ने मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करते हुए कहा कि जहां एक निजी पक्ष ने लोक प्राधिकरण के अभ्यावेदन पर कार्य किया है, वहां उचित मामलों में समानता के आधार पर प्राधिकरण के खिलाफ इसे लागू किया

⁵ (1955) 2 ऑल ईआर 657: (1955) 1 डब्ल्यूएलआर 761 (एचएल)

⁶ एआईआर 1968 एससी 718: (1968) 2 एससीआर 366

⁷ (1972) 1 एससीसी 857

⁸ (1970) 1 एससीसी 582: एआईआर 1971 एससी 1021



जा सकता है, भले ही अभ्यावेदन संविधान के अनुच्छेद 299 द्वारा निर्धारित उचित प्रारूप की कमी के कारण संविदा में परिणित न हुआ हो।

- (22) सरकार और लोक प्राधिकरण के खिलाफ वचनात्मक या साम्यागत विबंध के आवेदन से संबंधित संपूर्ण विधि पर **मोतीलाल पदमपत चीनी मिल्स बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**⁹ में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा गहराई से और बड़े विस्तार से विचार किया गया था। इस मामले में, अपीलार्थी एक लिमिटेड कंपनी थी। 10 अक्टूबर 1968 को एक समाचार प्रकाशित हुआ जिसमें कहा गया था कि उत्तरवादी राज्य ने राज्य में सभी नई औद्योगिक इकाइयों को धारा 4-ए, उत्तर प्रदेश बिक्री कर अधिनियम, 1948 के अंतर्गत तीन वर्ष की अवधि के लिए बिक्री कर से छूट देने का निर्णय लिया है। 11 अक्टूबर 1968 को अपीलार्थी ने उद्योग निदेशक को लिखा कि सरकार द्वारा घोषित बिक्री कर अवकाश के मद्देनजर, अपीलार्थी वनस्पति के निर्माण के लिए एक संयंत्र स्थापित करना चाहता है और छूट की पुष्टि चाहता है। उद्योग निदेशक ने स्थिति की पुष्टि की। उत्तर प्रदेश सरकार के मुख्य सचिव द्वारा उसी आशय का आश्वासन दिया गया। मई 1969 में राज्य सरकार ने छूट के सवाल पर पुनर्विचार किया और अपीलकर्ता से एक बैठक में भाग लेने का अनुरोध किया। बैठक में अपीलकर्ता के प्रतिनिधि ने दोहराया कि उत्तरवादी-सरकार ने पहले ही बिक्री कर से छूट दे दी है और आश्वासन के आधार पर अपीलकर्ता ने कारखाना स्थापित करने का काम आगे बढ़ाया है। हालाँकि, राज्य सरकार ने 20 जनवरी, 1970 को एक नीतिगत निर्णय लिया कि 30 सितंबर, 1970 तक वाणिज्यिक उत्पादन शुरू करने वाली नई वनस्पति इकाइयों को बिक्री कर में आंशिक छूट दी जाएगी। अपीलकर्ता की फैक्ट्री 2 जुलाई, 1970 को उत्पादन में आ गई, लेकिन राज्य सरकार ने एक बार फिर अपनी नीति बदल दी और 12 अगस्त, 1970 को रियायतों को रद्द करने का अपना निर्णय सुनाया। उच्च न्यायालय ने रिट को खारिज कर दिया और सरकार के खिलाफ वचन विबंध के तर्क को खारिज कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने अपील को स्वीकार करते हुए कहा कि जहां एक पक्षकार ने अपने शब्दों या आचरण से दूसरे पक्षकार से स्पष्ट और असंदिग्ध वचन दिया है जिसका उद्देश्य विधिक संबंध बनाना या

⁹ (1979) 2 एससीसी 409: 1979 एससीसी (कर) 144



भविष्य में उत्पन्न होने वाले विधिक संबंध को प्रभावित करना है, यह जानते हुए या यह आशय रखते हुए कि जिस दूसरे पक्षकार से वचन किया गया है, उसके द्वारा उस पर अमल किया जाएगा, और वास्तव में दूसरे पक्षकार द्वारा उस पर अमल किया जाता है, तो वचन करने वाले पक्षकार के लिए वचन बंधनकारी होगा और वह उससे पीछे हटने का हकदार नहीं होगा, यदि पक्षों के बीच हुए लेन-देन को ध्यान में रखते हुए उसे ऐसा करने की अनुमति देना अनुचित होगा, और यह इस बात पर ध्यान दिए बिना होगा कि पक्षों के बीच कोई पूर्व-विद्यमान संबंध है या नहीं।

- (23) वचन-विबंध के सिद्धांत को लागू करने के लिए केवल यह आवश्यक है कि वचनग्राहीता ने वचन पर निर्भर करते हुए अपनी स्थिति बदल ली हो। यह आवश्यक नहीं है कि उसे कोई हानि भी उठानी पड़े। राज्य और अन्य लोक प्राधिकारियों द्वारा किए गए वादों के मामले में अनुबंधों में लागू प्रतिफल का विधि लागू नहीं हो सकती। मोतीलाल पदमपत शुगर मिल्स⁹ (पूर्वोक्त) में निर्धारित विधि को सर्वोच्च न्यायालय ने यूनियन ऑफ इंडिया बनाम गॉडफ्रे फिलिप्स इंडिया लिमिटेड¹⁰ और एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम यूनियन ऑफ इंडिया¹¹ में दोहराया और पुष्ट किया। इसी बिंदु को न्यायालय ने दिल्ली क्लॉथ एंड जनरल मिल्स बनाम यूनियन ऑफ इंडिया¹² में आगे समझाया जहां उसने यह अभिनिर्धारित किया है, कि आश्वासन या अभ्यावेदन पर कार्यवाही करके स्थिति में परिवर्तन पर्याप्त है और इसके परिणामस्वरूप वचनग्राहीता को हुई हानि, क्षति या पक्षपात साबित नहीं किया जाना है। यह भी यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह महत्वहीन है कि ऐसा अभ्यावेदन स्थिति में ऐसे परिवर्तन के लिए पूरी तरह या आंशिक रूप से जिम्मेदार है। इसके अलावा, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि नुकसान की अवधारणा मौद्रिक नुकसान नहीं है, बल्कि यह है कि क्या यह अन्यायपूर्ण, अनुचित या असमान प्रतीत होता है कि वचन देने वाले को आश्वासन या अभ्यावेदन से पीछे हटने की अनुमति दी जानी चाहिए, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि वचन देने वाले ने आश्वासन या अभ्यावेदन पर भरोसा करके क्या किया है या क्या करने से परिहास किया है। उपरोक्त सिद्धांत को लागू करते हुए उच्चतम

¹⁰ (1985) 4 एससीसी 369: 1986 एससीसी (कर) 11

¹¹ (1986) 1 एससीसी 133: एआईआर 1986 एससी 872

¹² (1988) 1 एससीसी 86



न्यायालय ने **भीम सिंह बनाम हरियाणा राज्य**¹³ में सरकार को कर्मचारियों से किए गए अपने वचन से पीछे हटने से रोक दिया, जिसके आधार पर वे दूसरे विभाग में चले गए थे। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि अपीलकर्ताओं ने राज्य द्वारा किए गए अभ्यावेदन पर विश्वास किया है और आगे की कार्यवाही की है, उनकी उम्मीदों को नहीं हराया जा सकता है जो कि वचन विबंध के सिद्धांत के आधार पर अधिकारों में बदल गई हैं और इसलिए, राज्य ऐसे अधिकार और लाभ प्रदान करने के लिए बाध्य है, जिसका वचन उसने पूरी तरह से किया था।

- (24) इस पृष्ठभूमि में, यह कहना उचित होगा कि इस मामले के तथ्यों में वचन विबंध का सिद्धांत लागू होता है। सरकार और अन्य उत्तरवादी अधिकारियों ने टीएसएस के तहत याचिकाकर्ता-कंपनी को गंभीरता से अभ्यावेदन किया है कि यदि व्यक्ति बस्तर और सरगुजा जिलों में औद्योगिक इकाइयां स्थापित करते हैं तो उन्हें परिवहन सब्सिडी का भुगतान करना होगा और 16/12/1994 को आदेश पारित करके याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने का निर्देश दिया है और चूंकि याचिकाकर्ता-कंपनी ने अभ्यावेदन पर काम किया है और सीमेंट संयंत्र स्थापित किया है, इसलिए उत्तरवादी अधिकारी वचन विबंध के सिद्धांत के आधार पर याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के लिए बाध्य हैं। उत्तरवादीगण द्वारा 16/12/1994 के आदेश के माध्यम से अपने वचन से पीछे हटाने लिए प्रस्तुत किया गया बचाव, कम से कम कहने के लिए, पूरी तरह से मनयह अभिनिर्धारित किया और अनुचित है।

- (25) उत्तरवादीगण द्वारा याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान न करने का अन्य कारण यह बताया गया है कि टीएसएस 25/11/1989 को समाप्त हो गई थी। यह बचाव एक से अधिक कारणों से फिर से अस्थिर है। सर्व प्रथम, अनुलग्नक-पी/6 के अनुसार जो कि तीसरे उत्तरवादी द्वारा सरकार को लिखा गया दिनांक 15/12/1997 का पत्र है, यह दर्शित करता है कि टीएसएस वर्ष 1996-97 तक चालू था। दूसरे, यह ध्यान देने की जरूरत है कि परिवहन सब्सिडी योजना के नियमों के नियम 2 के नीचे, नोट में, यह कहा गया है कि वाणिज्य और उद्योग विभाग, मध्य प्रदेश सरकार के दिनांक 01/09/1985 के परिपत्र के अनुसार, टीएसएस

¹³ (1981) 2 एससीसी 673: एआईआर 1980 एससी 768



सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान भी जारी रहेगा। यह नोट जवाब में उत्तरवादीगण के इस दावे को गलत साबित करता है कि योजना केवल 25/11/1989 तक अस्तित्व में थी। तीसरा, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि याचिकाकर्ता-कंपनी ने टीएसएस का लाभ उठाते हुए सीमेंट संयंत्र स्थापित किया और 18/10/1986 को इसका व्यावसायिक उत्पादन शुरू हुआ, जब टीएसएस चलन में था। टीएसएस के नियमों के नियम 6(i) के अनुसार, चयनित क्षेत्रों में स्थित नई औद्योगिक इकाइयों को इकाइयों के उत्पादन शुरू करने की तिथि से पाँच वर्ष की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी का भुगतान किया जाना आवश्यक है। यह मानते हुए भी कि औद्योगिक इकाई की स्थापना के बाद और 18.10.1986 से वाणिज्यिक उत्पादन में जाने के बाद, टीएसएस को वापस ले लिया गया या समाप्त कर दिया गया, यह तथ्य अपने आप में उन औद्योगिक इकाइयों को वंचित नहीं करेगा जो टीएसएस के समाप्त होने या वापस लेने से पहले स्थापित की गई थीं और जो वाणिज्यिक उत्पादन में चली गई थीं। दूसरे शब्दों में, यद्यपि औद्योगिक इकाइयां जो टीएसएस की अवधि के दौरान स्थापित की गईं और जिनमें वाणिज्यिक उत्पादन शुरू हुआ, वे टीएसएस नियमों के नियम 6 (i) के अनुसार इकाइयों के उत्पादन शुरू करने की तिथि से पांच वर्ष की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी का दावा करने की हकदार हैं, भले ही वाणिज्यिक उत्पादन की तिथि से पांच वर्ष की अवधि के लिए टीएसएस चालू था या नहीं।

- (26) सबसे बढ़कर, टीएसएस के नियमों के अनुसार परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने से इनकार करने और 16.12.1994 के अपने पहले के आदेश को रद्द करने के उत्तरवादीगण की आपेक्षित कार्यवाही से मनमानी, अनुचितता और अन्याय की गंध आती है। दूसरे शब्दों में, उत्तरवादीगण की आपेक्षित कार्यवाही भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रावधानों का उल्लंघन करती है।
- (27) "वैध अपेक्षा" का सिद्धांत इस मामले के तथ्यों पर भी लागू होता है। वैध अपेक्षा का सिद्धांत संविधान के अनुच्छेद 14 में निहित है जो मनमानी से घृणा करता है और सभी प्रशासनिक व्यवहारों में निष्पक्षता पर जोर देता है। वैध अपेक्षा के सिद्धांत ने अब प्राकृतिक न्याय, गैर-मनयह अभिनिर्धारित किया पन और विधि के शासन के घटक के रूप में प्रशासनिक विधि में



महत्व प्राप्त कर लिया है। इसका उद्देश्य प्राकृतिक न्याय, अनुचितता, प्रशासनिक अधिकारियों के प्रत्ययी कर्तव्य के सिद्धांतों के पूरक के रूप में प्रशासनिक शक्ति के बढ़ते दुरुपयोग को रोकना है। वैध अपेक्षा का सिद्धांत लोक विधि के क्षेत्र से संबंधित है और इसका उद्देश्य लोगों को राहत देना है जब वे विधि के आधार पर अपने दावों को सख्त अर्थों में उचित ठहराने में सक्षम नहीं होते हैं, हालांकि उन्हें सिविल परिणाम भुगतना पड़ा है क्योंकि उनकी वैध अपेक्षाओं का उल्लंघन या निराशा हुई है। वैध अपेक्षा का सिद्धांत भारतीय विधि की नवीनतम खोज है और इसे न्यायिक पुनर्विलोकन के आधारों में से एक के रूप में देखा गया है, और इसने लोक शक्ति के दुरुपयोग या दुरुपयोग को रोकने के लिए लगभग सभी अधिकार क्षेत्रों में लोक विधि के एक महत्वपूर्ण सिद्धांत की स्थिति ग्रहण की है। **पंजाब कम्युनिकेशंस लिमिटेड बनाम यूनियन ऑफ इंडिया**¹⁴ मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वैध अपेक्षा प्रक्रियात्मक या मौलिक या दोनों हो सकती है। इसका प्रक्रियात्मक भाग इस बात से संबंधित है कि निर्णय में कोई भी परिवर्तन किए जाने से पहले सुनवाई या अन्य उचित प्रक्रिया अपनाई जाएगी। सिद्धांत का मौलिक भाग इस बात से संबंधित है कि मौलिक प्रकृति का लाभ प्रदान किया जाएगा या जारी रखा जाएगा। प्रक्रियात्मक वैध अपेक्षा को संबंधित व्यक्ति को यह तर्क देने का अवसर दिए बिना वापस नहीं लिया जा सकता कि इसे वापस नहीं लिया जाना चाहिए। इसी तरह, मौलिक अपेक्षा को तब तक वापस नहीं लिया जा सकता जब तक कि इसे वापस लेने के लिए कुछ तर्कसंगत आधार संबंधित व्यक्ति को नहीं बताए गए हों और जिस पर उसे टिप्पणी करने का अवसर नहीं दिया गया हो। मौलिक अर्थ में वैध अपेक्षा का सिद्धांत यह आज्ञापक करता है कि निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को आम तौर पर इसे या उसके अभ्यावेदन को प्रभावी करने के लिए बाध्य किया जा सकता है जब तक कि लोक हित की मांग न हो। **डॉ. चंचल गोयल (श्रीमती) बनाम राजस्थान राज्य**¹⁵ मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वैध अपेक्षा के सिद्धांत के मूल में विधि का शासन है जिसके लिए सरकार के जनता के साथ व्यवहार में नियमितता, पूर्वानुमेयता और निश्चितता की आवश्यकता होती है और अपेक्षा किसी स्पष्ट वचन, या अभ्यावेदन या स्थापित

¹⁴ (1999) 4 एससीसी 727

¹⁵ (2003) 3 एससीसी 485



पिछली कार्यवाही या तयशुदा आचरण पर आधारित हो सकती है। यह किसी व्यक्ति या आम तौर पर व्यक्तियों के एक वर्ग के लिए एक अभ्यावेदन हो सकता है।

- (28) याचिकाकर्ता-कंपनी की यह वैध अपेक्षा थी कि यदि वह बस्तर और सरगुजा जिलों में औद्योगिक इकाई स्थापित करती है, तो सरकार टीएसएस के अनुसार परिवहन सब्सिडी का भुगतान करेगी। याचिकाकर्ता-कंपनी की यह अपेक्षा टीएसएस के तहत राज्य सरकार द्वारा किए गए अभ्यावेदन से उत्पन्न हुई। यह सुस्थापित है कि "वैध अपेक्षा" याचिकाकर्ता को न्यायिक पुनर्विलोकन के लिए पर्याप्त सुने जाने का अधिकार और वाद हेतुक प्रदान करता है। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने **बन्नारी अम्मान शुगर्स लिमिटेड बनाम वाणिज्यिक कर अधिकारी और अन्य**¹⁶ में न्यायमूर्ति, **अरिजीत पसायत**, के माध्यम से बोलते हुए, न्यायिक पुनर्विलोकन के आधार के रूप में वैध अपेक्षा के सिद्धांत के आवेदन की रूपरेखा को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया:

"8. किसी व्यक्ति को प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा किसी निश्चित तरीके से व्यवहार किए जाने की "वैध अपेक्षा" हो सकती है, भले ही उसे व्यक्तिगत विधि में ऐसा व्यवहार प्राप्त करने का कोई विधिक अधिकार न हो। यह अपेक्षा प्राधिकारी द्वारा किए गए अभ्यावेदन या वचन से उत्पन्न हो सकती है, जिसमें निहित अभ्यावेदन शामिल है, या निरंतर पूर्व के चलन से। न्यायिक पुनर्विलोकन के विकासशील विधि में वैध अपेक्षा के सिद्धांत का एक महत्वपूर्ण स्थान है। हालाँकि, इस मामले में सिद्धांत का पता लगाना आवश्यक नहीं है, यह ध्यान रखना पर्याप्त है कि एक वैध अपेक्षा एक व्यक्ति को सक्षम करने के लिए पर्याप्त रुचि प्रदान कर सकती है जो न्यायिक पुनर्विलोकन के लिए आवेदन करने के लिए न्यायालय की अनुमति प्राप्त करने के लिए किसी मूल अधिकार के अस्तित्व की ओर इशारा नहीं कर सकता है। यह आम तौर पर सहमत है कि "वैध अपेक्षा" आवेदक को न्यायिक पुनर्विलोकन के लिए सुने जाने का पर्याप्त अधिकार

¹⁶ (2005) 1 एससीसी 625



प्रदान करती है और वैध अपेक्षा के सिद्धांत को निर्णय से पहले निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार तक सीमित रखा जाना चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप कोई वचन अस्वीकार या उपक्रम वापस लिया जाता है। सिद्धांत प्रशासनिक अधिकारियों से सीधे राहत का दावा करने की गुंजाइश नहीं देता है क्योंकि ऐसा कोई सुस्पष्ट अधिकार शामिल नहीं है। ऐसी वैध अपेक्षा की सुरक्षा के लिए अपेक्षा की पूर्ति की आवश्यकता नहीं होती है, जहाँ कोई सर्वोपरि लोक हित के लिए अन्यथा की आवश्यकता होती है। दूसरे शब्दों में, जहां किसी व्यक्ति की वैध अपेक्षा किसी विशेष निर्णय लेने से पूरी नहीं होती है, तो निर्णयकर्ता को कुछ सर्वोपरि लोक हित दिखाकर ऐसी अपेक्षा को अस्वीकार करने का औचित्य सिद्ध करना चाहिए।

9. कार्यकारी शक्ति के प्रयोग में नीति को बदलने का विवेकाधिकार, जब किसी विधि या नियम से बाधित न हो, काफी व्यापक है, अनुच्छेद 14 के संदर्भ में मनमाने ढंग से या किसी गुप्त मानदंड के आधार पर क्या आज्ञापक और निहित है। अनुच्छेद 14 का व्यापक विस्तार और राज्य की गतिविधि के क्षेत्र की परवाह किए बिना इस कसौटी पर राज्य की प्रत्येक कार्यवाही की वैधता की योग्यता की आवश्यकता एक स्वीकृत सिद्धांत है। अनुच्छेद 14 की बुनियादी आवश्यकता राज्य द्वारा कार्यवाही में निष्पक्षता है, और सार और अर्थ में गैर-मनमानी निष्पक्ष क्रियाकलाप का हृदयस्पंदन है। न्यायिक पुनर्विलोकन के परिदृश्य में कार्यवाही केवल इस सीमा तक स्वीकार्य है कि राज्य को किसी गुप्त उद्देश्य के लिए मनमाने ढंग से नहीं, बल्कि स्पष्ट कारणों से वैधता के साथ कार्य करना चाहिए। मनमानी का अर्थ और सही अर्थ और अवधारणा को ठीक से परिभाषित करने की तुलना में अधिक आसानी से कल्पना की जा सकती



है। ऐसे मामलों में लागू करने के लिए एक बुनियादी और स्पष्ट परीक्षण यह देखना है कि क्या आपत्तिजनक कार्यवाही से कोई स्पष्ट सिद्धांत उभर कर आता है और यदि ऐसा है, तो क्या यह वास्तव में युक्तियुक्तता के परीक्षण को संतुष्ट करता है।"

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैराग्राफ 8 और 9 में जो कहा गया है, वह टीएसएस में किए गए अपने वचन/अभ्यावेदन से मुकरने के सरकार के कदम की निंदा करने के लिए बहुत ही मार्गदर्शक और बंधनकारी सिद्धांत हैं, साथ ही 16/12/1994 के अपने आदेश में भी यह कहा गया है कि यह अनुचित और मनयह अभिनिर्धारित किया है। उत्तरवादी अपने वचन से पीछे हटने के लिए कोई भी सर्वोपरि जनहित दिखाने में पूरी तरह विफल रहे हैं। सरकार का दिनांक 23/06/1999 का आदेश केवल याचिकाकर्ता-कंपनी के वैध दावे को अस्वीकार करने के लिए है और यह किसी भी सर्वोपरि जनहित से प्रेरित नहीं है।

(29) **केरल राज्य बनाम के.जी. माधवन पिल्लई¹⁷** मामले में सरकार ने उत्तरवादीगण को एक नया गैर-अनुदान प्राप्त स्कूल खोलने और मौजूदा स्कूलों को अपग्रेड करने के लिए मंजूरी जारी की थी। हालांकि, पंद्रह दिनों के बाद मंजूरी को स्थगित रखने का निर्देश जारी किया गया। इस आदेश को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन के आधार पर चुनौती दी गई थी। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मंजूरी आदेश ने उत्तरवादीगण में वैध अपेक्षा पैदा की जिसका उल्लंघन प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किए बिना दूसरे आदेश द्वारा किया गया जो एक प्रशासनिक आदेश को दूषित करने के लिए पर्याप्त है। इस मामले में अभिनिर्धारित विधि इस मामले के तथ्यों पर पूरी तरह लागू होता है। इस मामले में भी, सरकार ने याचिकाकर्ता-कंपनी को मामले में अपनी बात रखने के लिए कोई नोटिस जारी किए बिना 23/06/1999 का आदेश अभिनिर्धारित जारी करके टीएसएस और 16/12/1994 के आदेश में किए गए अपने वचन को वापस ले लिया है और इस तरह कार्यवाही में प्राकृतिक न्याय और निष्पक्षता के सिद्धांतों का उल्लंघन किया है।

¹⁷ (1988) 4 एससीसी 669: एआईआर 1989 एससी 49



(30) एससी और डब्ल्यूएस वेलफेयर एसोसिएशन बनाम कर्नाटक राज्य¹⁸ मामले में, सरकार ने एक अधिसूचना जारी की थी जिसमें उन क्षेत्रों को अधिसूचित किया गया था जहाँ झुग्गी-झोपड़ी हटाने की योजना शुरू की जाएगी। हालाँकि, बाद में अधिसूचना में संशोधन किया गया और पहले अधिसूचित कुछ क्षेत्रों को छोड़ दिया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पहले की अधिसूचना ने उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों में वैध अपेक्षाएँ जगाई थीं जिन्हें बाद की अधिसूचना में छोड़ दिया गया था। इसलिए, निष्पक्ष सुनवाई के बिना वैध अपेक्षा को नकारा नहीं जा सकता। यह निर्णय यह बताने के लिए बंधनकारी है कि जहाँ किसी व्यक्ति को किसी विशेष तरीके से व्यवहार किए जाने की वैध अपेक्षा है जो लागू करने योग्य अधिकार से कम है, प्रशासनिक प्राधिकारी निष्पक्ष सुनवाई के बिना उसे उसकी वैध अपेक्षा से वंचित नहीं कर सकता।

(31) नवज्योति सहकारी समूह आवास सोसायटी बनाम भारत संघ¹⁹ मामले में विकास प्राधिकरण ने बिना किसी नोटिस और सुनवाई के सहकारी समितियों को भूमि आवंटन के लिए प्राथमिकता के क्रम को 'पंजीकरण की क्रम संख्या' से बदलकर 'सदस्यों की सूची के अनुमोदन की तिथि' कर दिया था। वैध अपेक्षा के उल्लंघन के आधार पर उस आदेश को रद्द करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि जहाँ सरकार की पुरानी नीति के तहत कुछ लाभ या सुविधा का आनंद लेने वाले व्यक्ति वैध अपेक्षा प्राप्त करते हैं, भले ही उन्हें इसके जारी रहने के संबंध में व्यक्तिगत विधि के तहत कोई विधिक अधिकार न हो, लेकिन उस नीति को बदलने से पहले उस लाभ या सुविधा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने से पीड़ित व्यक्ति निष्पक्ष सुनवाई के हकदार हैं। यह निर्णय इस मामले में याचिकाकर्ता-कंपनी के मामले का भी पूरी तरह से समर्थन करता है।

(32) भारत संघ बनाम हिंदुस्तान डेवलपमेंट कॉरपोरेशन²⁰ मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने वैध अपेक्षा के सिद्धांत का अर्थ और दायरा निम्नलिखित शब्दों में निर्धारित किया:

"समय तीन भागों में बंटा है: वर्तमान जैसा कि हम इसे अनुभव करते हैं,

अतीत वर्तमान स्मृति के रूप में और भविष्य वर्तमान अपेक्षा के रूप में।

¹⁸ (1991) 2 एससीसी 604

¹⁹ (1992) 4 एससीसी 477

²⁰ (1993) 3 एससीसी 499



विधिक उद्देश्य के लिए, अपेक्षा प्रत्याशा के समान नहीं हो सकती। यह इच्छा, चाहत या आशा से अलग है और न ही यह अधिकार के आधार पर दावा या मांग के बराबर हो सकती है। कोई इच्छा, चाहत या आशा चाहे कितनी भी गंभीर और सच्ची क्यों न हो और कोई व्यक्ति चाहे कितने भी आत्मविश्वास से उनके पूरा होने की उम्मीद क्यों न करे, वे अपने आप में एक पुष्ट अपेक्षा नहीं हो सकती हैं और केवल निराशा विधिक परिणामों को आकर्षित नहीं करती है। एक पवित्र आशा एक वैध अपेक्षा नहीं हो सकती है। किसी अपेक्षा की वैधता का अनुमान तभी लगाया जा सकता है जब वह विधि या रीति-रिवाज या प्राकृतिक और नियमित अनुक्रम में पालन की जाने वाली स्थापित प्रक्रिया की मंजूरी पर आधारित हो। पुनः से यह केवल अपेक्षा से अलग है। ऐसी अपेक्षा उचित रूप से वैध और संरक्षित होनी चाहिए। ऐसी प्रत्येक वैध अपेक्षा अपने आप में एक अधिकार में परिणित नहीं होती है और इसलिए, यह पारंपरिक अर्थों में अधिकार नहीं है।"

- (33) उपरोक्त वर्णित बातों के मद्देनजर, उत्तरवादीगण के लिए यह आज्ञापक हो जाता है कि वे टीएसएस के अनुसार याचिकाकर्ता कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करें।
- (34) याचिकाकर्ता का यह तर्क भी सही है कि उत्तरवादी टीएसएस के तहत स्थापित औद्योगिक इकाइयों को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने के मामले में भी भेदभाव करने के दोषी हैं। स्वीकृतरूप से, उत्तरवादीगण ने राज्य के बाहर माल के परिवहन के संबंध में मेसर्स रुद्र सीमेंट लिमिटेड को परिवहन सब्सिडी का भुगतान किया है, लेकिन, उत्तरवादीगण ने राज्य के बाहर माल के परिवहन के संबंध में याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने से इनकार कर दिया है। इस प्रकार, यह भेदभाव का एक स्पष्ट मामला है। अनुच्छेद 14 समान सुरक्षा की गारंटी देता है। समान सुरक्षा का अर्थ है समान परिस्थितियों में समान व्यवहार का अधिकार, प्रदान किए गए विशेषाधिकारों और लगाए गए दायित्वों दोनों में। चूंकि समान संरक्षण



की गारंटी 'राज्य कार्यवाही' के पूरे क्षेत्र को शामिल करती है, इसलिए यह न केवल तब लागू होगी जब किसी व्यक्ति के साथ उसके अधिकारों के प्रयोग के मामले में या उस पर दायित्व थोपने के मामले में भेदभाव किया जाता है, बल्कि विशेषाधिकार देने के मामले में भी लागू होगी, जैसे कि व्यवसाय में प्रवेश करने के लिए लाइसेंस देना, सरकारी व्यवसाय से संबंधित संविदा में प्रवेश करने के लिए निविदाएं आमंत्रित करना, या कोटा जारी करना, नौकरी देना आदि। अनुच्छेद 14 गारंटी देता है कि एक व्यक्ति और दूसरे के बीच कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए यदि संबंधित विषय-वस्तु के संबंध में उनकी स्थिति समान है। दूसरे शब्दों में, राज्य की कार्यवाही मनमानी नहीं होनी चाहिए बल्कि कुछ वैध सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए जो स्वयं तर्कहीन या भेदभावपूर्ण नहीं होनी चाहिए। वर्तमान मामले में, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि याचिकाकर्ता-कंपनी और मेसर्स रुद्र सीमेंट लिमिटेड अनुच्छेद 14 के प्रयोजन के लिए समान परिस्थितियों में हैं और इसलिए, याचिकाकर्ता-कंपनी उसी तरह के व्यवहार की हकदार है जो उत्तरवादीगण द्वारा उक्त मेसर्स रुद्र सीमेंट लिमिटेड को दिया गया है। इसलिए, मैं मानता हूँ कि उत्तरवादीगण द्वारा याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने से इनकार करना संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा निषिद्ध भेदभाव के समान है।

(35) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता-कंपनी को परिवहन सब्सिडी का भुगतान 18/10/1986 को उसकी इकाई के वाणिज्यिक उत्पादन में आने के तुरंत बाद किया जाना चाहिए था; सरकार ने अपने स्वयं के अभ्यावेदन/वचन का सम्मान नहीं किया और याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा किए गए कई अभ्यावेदनों और 16/12/1994 के अपने स्वयं के आदेश और उत्तरवादी 3 और 4 द्वारा समय-समय पर परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने और उक्त उद्देश्य के लिए आवश्यक बजट प्रदान करने की सिफारिशों के बावजूद परिवहन सब्सिडी का भुगतान नहीं किया। इसलिए, याचिकाकर्ता-कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने में अत्यधिक देरी के लिए उचित ब्याज भी देने का अनुरोध किया।

(36) मैंने याचिकाकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका और अन्य तर्कों का अवलोकन किया है। याचिकाकर्ता ने परिवहन सब्सिडी के विलंबित भुगतान पर ब्याज देने के लिए न्यायालय से विशेष रूप से



प्रार्थना नहीं की है। हालांकि, यह सुस्थापित है कि रिट याचिका में विशिष्ट प्रार्थना के अभाव में भी, न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और न्यायसंगत आधार पर राहत को मोड़ सकता है यदि न्याय में इस तरह की कार्यवाही की आवश्यकता है। यहां एक मामला है जहां याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा स्थापित इकाई ने 18/10/1986 को वाणिज्यिक उत्पादन शुरू किया और यह टीएसएस के नियमों के नियम 6(i) के अनुसार इकाई के वाणिज्यिक उत्पादन में आने की दिनांक से पांच वर्ष की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी का दावा करने का हकदार था। मामले के उस दृष्टिकोण से, सरकार को याचिकाकर्ता-कंपनी द्वारा मांग किए जाने पर परिवहन सब्सिडी का भुगतान करना चाहिए था। याचिकाकर्ता 18-10-1986 से 17-10-1991 तक पांच वर्ष की अवधि के लिए सब्सिडी का हकदार है।

- (37) **कार्यकारी अभियंता, ढेंकनाल लघु सिंचाई प्रभाग बनाम एन.सी. बुधराज**²¹ में, दुरईस्वामी राजू न्यायमूर्ति के माध्यम से बोलते हुए बहुमत ने यह अभिनिर्धारित किया है कि विधि की मूल प्रतिपादन है कि जिस व्यक्ति को उस धन के उपयोग से वंचित किया जाता है, जिसका वह वैध रूप से हकदार है, उसे इस वंचना के लिए किसी भी नाम से प्रतिपूर्ति पाने का अधिकार है, जैसे ब्याज, मुआवजा या क्षति और यह प्रतिपादन अचूक और वैध है; ऐसे विधि की प्रभावकारिता और बंधनकारी प्रकृति को फीका या कम नहीं किया जा सकता है। उस मामले में, यह यह अभिनिर्धारित किया गया था कि संविदा के तहत देय राशि पर ब्याज देने के लिए मध्यस्थ के अधिकार क्षेत्र को छोड़कर मध्यस्थता समझौते में किसी भी चीज की अनुपस्थिति में, और किसी अन्य निषेध की अनुपस्थिति में, मध्यस्थ ब्याज दे सकता है। सुप्रीम कोर्ट ने यह भी अवलोकित किया है कि कुछ परिस्थितियों में ब्याज समानता में देय है। समानता में नियम यह है कि ब्याज उस प्रभाव के किसी भी समझौते या प्रथा की अनुपस्थिति में भी देय है, हालांकि, निश्चित रूप से, एक विपरीत समझौते के अधीन है। यह भी यह अभिनिर्धारित किया गया कि समानता में ब्याज का भुगतान बाजार दर में किया जाना चाहिए, भले ही विलेख या संविदा में ब्याज का कोई उल्लेख न हो। सर्वोच्च न्यायालय का यह निर्णय यह बताने का अधिकार है कि पक्षों के बीच संविदा

²¹ (2001) 2 एससीसी 721



की अनुपस्थिति में भी, यदि आवेदक को उस धन से वंचित किया जाता है जिसका वह वैध रूप से हकदार है, तो वह उचित दर पर ब्याज का दावा करने का हकदार है। निष्पक्षता, तर्कसंगतता और समानता के सिद्धांत ऐसे दावे का समर्थन करते हैं।

(38) **अबाती बेंजबुरुआ बनाम उप महानिदेशक, भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण और अन्य**²² मामले में माननीय न्यायाधीश डॉ. एआर लक्ष्मणन ने अपने समवर्ती निर्णय में इस प्रकार कहा:

"यदि दावेदार विशेष रूप से इसके लिए अबिवचन नहीं करता है, तब भी ब्याज दिया जा सकता है, क्योंकि विधि की दृष्टि में यह परिणामी है। ब्याज, धन के रोके जाने या रोके जाने के लिए प्रतिपूर्ति है और यह ब्याज किसी पक्ष को केवल इसलिए दिया जाता है, क्योंकि उसे उस धन से वंचित रखा गया है, जो उसे दिया जाना चाहिए था।"

उसी राय में, माननीय न्यायाधीश ने यह भी कहा कि ब्याज की दर प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर न्यायसंगत और युक्तियुक्त होनी चाहिए और इसे मुद्रास्फीति, अर्थव्यवस्था में बदलाव, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा समय-समय पर अपनाई जाने वाली नीति सहित सभी सुसंगत कारकों को ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया जाना चाहिए। बेशक, न्यायालय द्वारा मोटर वाहन अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत उत्पन्न होने वाले मुआवजे के दावे के संबंध में ये टिप्पणियां की गई थीं, लेकिन, जो देखा गया वह मौद्रिक दावों के अन्य क्षेत्रों पर भी समान रूप से लागू होता है। उस मामले में, न्यायालय ने 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज दिया।

(39) **क्लेरिंट इंटरनेशनल लिमिटेड एवं अन्य बनाम भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड**²³ मामले में भी सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि न्यायसंगत विचारों के आधार पर तथा ऐसे न्यायसंगत क्षेत्राधिकार के प्रयोग को उचित ठहराने वाली समग्र परिस्थितियों की स्थापना के आधार पर भी ब्याज प्रदान किया जा सकता है।

²² (2003) 3 एससीसी 148

²³ (2004) 8 एससीसी 524



(40) ऊपर उल्लिखित सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय स्पष्ट रूप से न्यायालय को ब्याज का दावा करने के लिए पक्षों के बीच संविदा की अनुपस्थिति में भी उचित दर पर ब्याज देने के लिए सशक्त करता है। इस मामले में, सरकार को याचिकाकर्ता-कंपनी को 18-10-1986 से 17-10-1991 तक या उसके तुरंत बाद पांच वर्ष की अवधि के लिए परिवहन सब्सिडी का भुगतान करना चाहिए था। उत्तरवादीगण ने पंद्रह वर्ष से अधिक समय तक भुगतान रोक रखा है। 1990 के दशक में ब्याज की दर बहुत अधिक थी, हालांकि हाल के दिनों में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा ब्याज दर में भारी कमी की गई है। इसलिए, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, परिवहन सब्सिडी का भुगतान करने में देरी की अवधि और पक्षों के आचरण को ध्यान में रखते हुए, मुझे लगता है कि 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज एक न्यायसंगत और युक्तियुक्त दर होगी और यह न्याय के उद्देश्यों को पूरा करेगी।

(41) परिणामस्वरूप, मैं रिट याचिका को स्वीकार करता हूँ और 23/06/1999 के शासकीय आदेश को रद्द करता हूँ। उत्तरवादीगण को 17/10/1991 से भुगतान तक की अवधि के लिए 9% प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ 34,90,704/- (चौत्तीस लाख, नब्बे हजार, सात सौ चार रुपये) का भुगतान करने का निर्देश जारी किया जाता है। उत्तरवादीगण को आज से दो महीने की अवधि के भीतर इस निर्देश का अनुपालन करना होगा।

सही/-

मुख्य न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित यह अभिनिर्धारित किया जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।